

राजस्थान का वर्धित संस्कार: एक विवरण

डॉ. विजय कुमार वर्मा
डॉ० शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास
विश्वविद्यालय, लखनऊ

बी. आर. चौहान ने अपनी उच्च शिक्षा लखनऊ विश्वविद्यालय (भारत) और बर्कले, कैलिफोर्निया (यू. एस.ए.) से प्राप्त की। इन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय से प्रोफेसर डी. एन. मजूमदार के निर्देशन में अपना शोध कार्य शुरू किया। इन्होंने कई महत्वपूर्ण पदों पर, जैसे—मेरठ विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग में संस्थापक प्रोफेसर, जी.बी. पंत समाज विज्ञान संस्थान, इलाहाबाद में अध्येता और इंडियन सोशियोलॉजिकल सोसाइटी के अध्यक्ष के रूप में कार्य किया है। इन्होंने कई पुस्तकें और लेख लिखे हैं, शोध परियोजनाएं और सेमिनार तथा संगोष्ठियां आयोजित की हैं।

डॉ. चौहान ने अपनी पुस्तक ए राजस्थान विलेज (A Rajasthan Village) के प्रथम संस्करण की भूमिका में "लघु समुदाय" की अवधारणा को एक विश्लेषणात्मक शोध पद्धति रूप में अपनाते हुए राजस्थान के गाँव "राणावतों की सदरी" के अध्ययन की सार्थकता को स्पष्ट किया। यह रचना जिस अध्ययन पर आधारित है, वह 1955 में "ए स्टडी ऑफ लिटिल कम्युनिटी इन राजस्थान" शीर्षक से शोध प्रबंध के रूप में लखनऊ विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. प्राप्त करने के लिए किया गया था। डॉ. चौहान का मानना है कि इस तरह के अध्ययनों ने समाजशास्त्र के विद्यार्थियों को ग्रामीण समुदायों को विशेष दृष्टि से देखने के लिए प्रेरित किया।

डॉ. चौहान का कहना है कि "राणावतों की सदरी" तत्कालीन समय में उत्तर भारत के राजस्थान राज्य के चित्तौड़गढ़ जिले में स्थित था। स्वतंत्रता से पूर्व यह गाँव मेवाड़ राज्य के अंतर्गत एक "जागीर" गाँव था। एक छोटे गाँव या पुरवे के आरंभिक बिंदु से शुरू करके "राणावतों की सदरी" ने अपनी प्रौढ़ अवस्था से गुजरते हुए 100 वर्षों में पूर्ण विकसित ग्रामीण समुदाय की विशेषताओं को ग्रहण कर लिया है।

डॉ. चौहान ने "राणावतों की सदरी" के अपने अध्ययन में रॉबर्ट रेडफील्ड द्वारा प्रतिपादित "लघु समुदाय" (Little Community) की जिस अवधारणा को विश्लेषणात्मक शोध पद्धति के रूप में ग्रहण किया, उसे रेडफील्ड ने अपनी रचना द लिटिल कम्युनिटी में 1955 में व्यक्त किया था। रेडफील्ड ने लघु समुदाय को निम्न चार विशेषताओं के आधार पर परिभाषित किया है:

1. **स्पष्टता** : जहां से समुदाय शुरू होता है और जहां खत्म होता है, वे सीमाएं स्पष्ट हैं।
2. **लघुता** : 'संप्रदाय या तो यह स्वयं व्यक्तिगत पर्यवेक्षण की इकाई होता है या थोड़ा बड़ा होता है लेकिन फिर भी समरूप होने के कारण अपने ही किसी एक हिस्से में संपूर्ण का पूरी तरह प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तिगत पर्यवेक्षण की इकाई प्रदान कर देता है।'
3. **समरूपता** : 'समान लिंग और आयु वर्ग के सभी सदस्यों की गतिविधियां और मानसिक अवस्था समान होती है (किसी एक पीढ़ी का जीवनक्रम पिछली पीढ़ी के जीवनक्रम को दोहराता है)।'

4. आत्म परिपूर्णता : यह अपने लोगों की सभी या अधिकांश गतिविधियों और जरूरतों को पूरा करता है। लघु समुदाय पालने-से-कब्र तक का इंतजाम होता है।'

डॉ. चौहान ने लघु समुदाय के विश्लेषणात्मक ढांचे को उसकी विशेषताओं, स्पष्टता या भिन्नता, लघुता, समरूपता एवं आत्मनिर्भरता के साथ गाँव को समझने का आरंभिक सांचा माना है। इनका मानना है कि लघुता और स्पष्टता या पृथक्ता या भिन्नता का गुण समुदाय के संबंध में आंकड़ों के संचयन एवं व्यवस्थित संयोजन में सार्थक बिंदु सिद्ध होते हैं। समरूपता नामक तत्त्व भारतीय गाँवों की विस्तृत योजना के अंतर्गत एक गाँव के विश्लेषण के संबंध में कुछ कठिनाइयां खड़ी करता है।

प्रत्येक जाति समरूपता को व्यक्त करती है परंतु ग्रामीण समुदाय, जो इन समरूप इकाइयों की शरणस्थली है, वह स्वयं में विभिन्नता या असमरूपता को व्यक्त करता है। छोटे गाँव या पुरवे की स्थिति से इसकी क्रमिक वृद्धि से ज्ञात होता है कि विभिन्नता में वृद्धि समुदाय के विकास में प्रकार्यात्मक भूमिका निभाती है। आत्म निर्भरता, समुदाय के लक्षण के बजाय, अन्य समुदायों के साथ गाँव की कड़ी या संबंधों के मूल्यांकन की संभावनाएं और इससे उत्पन्न कड़ी के चार स्तरीय वर्गीकरण को संभव बनाती है, जो इस प्रकार हैं—

1. पारंपरिक ग्रामीण
2. पारंपरिक नगरीय
3. आधुनिक ग्रामीण, और
4. आधुनिक नगरीय।

लौकिकीकरण

एम.एन. श्रीनिवास का कहना है कि, लौकिकीकरण शब्द में वह बात निहित है जिसे पहले धार्मिक माना जाता था, यह अब वैसा नहीं माना जाता और उसमें विभेदीकरण की एक प्रक्रिया भी निहित है, जिसके परिणामस्वरूप समाज के विभिन्न आर्थिक, राजनीतिक, कानूनी और नैतिक पक्ष एक-दूसरे के मामले में अधिकाधिक "सावधान" होते जाते हैं। चर्च और राज्य में अंतर तथा धर्मनिरपेक्ष राज्य की भारतीय अवधारणा, दोनों ही में ऐसे विभेदीकरण के अस्तित्व की स्वीकृति निहित है।

लौकिकीकरण का दूसरा आवश्यक तत्त्व है, बुद्धिवाद। बुद्धिवाद एक व्यापक शब्द है, जो उन विविध सैद्धांतिक तथा व्यावहारिक प्रवृत्तियों के लिए प्रयुक्त होता है, जिनका लक्ष्य जगत की विशुद्ध चिंतन के रूप में व्याख्या करना है अथवा जो वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन को तर्क-बुद्धि के सिद्धांत के अनुसार नियमित करना और समस्त तर्कहीन बातों को यथासंभव मिटाना अथवा पीछे धकेलना चाहती है। अन्य बातों के अतिरिक्त बुद्धिवाद में पारंपरिक विश्वासों और धारणाओं के स्थान पर आधुनिक ज्ञान की स्थापना निहित है।

यह मानना शायद ठीक ही होगा कि लौकिकीकरण की प्रक्रिया से भारत के अन्य किसी धार्मिक समूह की अपेक्षा हिंदू ही अधिक प्रभावित हुए क्योंकि, एक तो, पवित्रता-अपवित्रता की धारणाएं, जो हिंदू धर्म में केंद्रीय और व्यापक हैं, पूर्वोल्लेखित विविध कारणों से बहुत क्षीण हुईं। साथ ही हिंदू धर्म का कोई एक केंद्रीय देशव्यापी संगठन और उसका कोई एक प्रधान नहीं है और वह जीवित बने रहने के लिए जाति, संयुक्त परिवार और ग्रामीण समुदाय जैसी सामाजिक संस्थाओं पर अधिकतर निर्भर है जो महत्वपूर्ण बातों में बदलती जा रही है।

लौकिकीकरण की प्रक्रिया से प्रभावित होने वाला एक अन्य क्षेत्र है, जीवन-चक्र का कर्मकांड। जीवन-चक्र के विभिन्न मोड़ों पर होने वाले संस्कारों में कुछ कमी आई है। साथ ही उनके नितांत सामाजिक पक्षों ने पहले से ज्यादा महत्त्व प्राप्त कर लिया है। कुछ ऐसे संस्कारों को, जैसे नामकरण, मुंडन, उपाकर्म को अब छोड़ने की प्रवृत्ति शुरू हो रही है। लड़कियों के लिए यौवनारंभ पर वह विस्तृत कर्मकांड नहीं किया जाता जो कुछ दशक पहले तक अनिवार्य था। मृत पति के दाह-संस्कार के अंग के रूप में ब्राह्मण विधवा का मुंडन भी अधिकतर नहीं किया जाता और शिक्षितों में विधवा-विवाह को इतना अधिक निंद्य नहीं समझा जाता।

संस्कार की संरचना

डॉ. चौहान ने संस्कार की संरचना की व्याख्या करते हुए कहा, यह व्यक्ति के जीवन के वे दृष्टिकोण हैं, जिनके द्वारा वे पराभौतिक तत्त्वों से जुड़ते हैं और उनसे समझौता करने के लिए कुछ रास्ते तलाशने में सफल होते हैं। विकसित विचार के अनुसार, असामान्य या विलक्षण, परिभाषा का एक विषय है और इसका अर्थ है एक ही समुदाय में भिन्न व्यक्तियों के लिए भिन्न वस्तुएं या विषय।

विलक्षण जीवन का वृत्तखंड दो भागों में बंटा होता है—

1. जहां एक व्यक्ति उन शक्तियों से समझौता करने का प्रयास करता है, जिनका अस्तित्व है;
2. जहां वह उनका उपाय करने का प्रयास नहीं करता।

जीवन के संस्कार का खंड प्रथम परिस्थिति से जुड़ा है, न कि दूसरे से।

डॉ. चौहान का कहना है कि "राणावतों की सदरी" के निवासी अनेक अवसरों पर जादू के साथ धर्म को संबद्ध कर देते हैं। इनकी संस्कार संरचना का यथोचित अध्ययन करने के लिए दोनों को समाहित करना चाहिए। इस अध्ययन में उन संस्कारों को समझने की कोशिश की गई है जिनका संबंध त्योहारों, देवताओं और बीमारियों, जीवन-चक्र, दान और तीर्थयात्रा से है।

डॉ. चौहान ने इस गाँव के संस्कारों के मूल तत्त्वों एवं उनमें होने वाले परिवर्तनों की दिशा पर प्रकाश डाला है। इनके अनुसार, निम्न जाति के लोग, "प्रसादी" और "विवाह" जैसे अवसरों पर शिल्पकार एवं अन्य सेवा प्रदाता समूहों को अपने साथ जोड़ने का प्रयास करते हैं। मध्यम समूहों वाली जातियाँ संस्कारों को विस्तारपूर्वक एवं सही रीति से करने पर ज्यादा जागरूकता दिखाती हैं। ये पुरोहित से संस्कारों को शास्त्रीय विधि-विधान से करने पर बल देते हैं। अन्य जातियों के संबंध में ये लोग महसूस करते हैं कि जितना ज्यादा काम शिल्पकारों और सेवा प्रदाता समूहों से कराया जाएगा उतनी ही ज्यादा प्रतिष्ठा आश्रयदाता और उसकी जाति की होगी।

डॉ. चौहान ने यह प्रश्न उठाया है कि,

(अ) इन संस्कारगत क्रियाकलापों में कौन प्रतिभागी होता है?

(ब) प्रतिभागियों की कौन-सी जरूरतें इन संस्कारों द्वारा परिपूर्ण होती हैं?

डॉ. चौहान ने इस प्रश्न पर भी ध्यान दिया है कि क्या संस्कार गाँवों की एकता को बढ़ाते हैं? यह प्रश्न संस्कार की संरचना के विशेष तत्त्व से जुड़ा हुआ है। गाँवों की एक संस्थापक देवी हैं जिन्हें "खेड़ा खुंत की देवी" कहा जाता है। "लाल माता" और "भदेरिया जी" प्रायः घर की सीमा एवं निवासियों की देखभाल में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मंदिर एवं उसकी देखभाल करने वाले "साधु" गाँव को अपनी एक पहचान देते हैं। डॉ. चौहान का कहना है कि अगर हम लौकिकीकरण

का रुझान देखें तो संस्कारों की सामग्री से इसका बेहतर उत्तर मिल सकता है, जिसकी रीति में जहां ह्रास दिखता है वहीं वे अधिक श्रेष्ठता भी प्राप्त करते हुए दिखते हैं।

लौकिकीकरण एवं वर्धित संस्कार

डॉ. चौहान के अनुसार "राणावतों की सदरी" के संस्कार की स्थिति में होने वाले परिवर्तनों को दो बिंदुओं पर चिह्नित किया जा सकता है—

1. लोक-नगरीय सातत्य के दृष्टिकोण से संस्कारों के अध्ययन द्वारा इस विचार पर बल पड़ता है कि इसमें पवित्रता से लौकिकता की ओर क्रमशः रूपांतरण हो रहा है।
2. भारतीय समाज के तात्कालिक अध्ययनों द्वारा उद्घाटित होता है कि जनजाति एवं निम्न जातियां संस्कार प्रक्रिया द्वारा अपनी संपूर्ण प्रस्थिति को ऊपर उठाने (सुधारने) का प्रयास कर रही हैं।

ये प्रक्रियाएं गाँव स्तर पर किस प्रकार कार्य करती हैं? यदि दोनों प्रक्रियाएं ग्रामीण भारत के सामाजिक ढाँचे में विद्यमान हैं तो लौकिकीकरण के विपरीत एक शब्द होना चाहिए। इस उद्देश्य से एक शब्द समूह "वर्धित संस्कार" प्रतिपादित किया है। श्रीनिवास द्वारा वर्णित "संस्कृतिकरण" से इसका तुलनात्मक वर्णन निम्न प्रकार है—

1. नया शब्द, "लौकिकीकरण" के साथ प्रतिरूप में एक समूह निर्मित करता है;
2. यह शब्द भिन्न संस्कृतियों के विश्लेषण में प्रयोग किया जा सकता है, क्योंकि यह संस्कृतिकरण की तरह किसी विशेष दिशा में गतिशीलता को व्यक्त करने तक सीमित नहीं है;
3. ग्रामीण वातावरण में कुछ संस्कार लोगों की गैर-शास्त्रीय किंतु अर्द्ध-जादुई परंपरा से संबद्ध हैं। यदि संस्कृतिकरण शब्द प्रयोग किया जाए, तो इन परंपराओं में होने वाली बढ़ोत्तरी को विश्लेषण से हटाना पड़ेगा;
4. एक साथ लौकिकीकरण और वर्धित संस्कार जैसे दो-शब्दों वाला समूह महत्वपूर्ण अन्वेषक मूल्य रखता है, जो अन्वेषक के मस्तिष्क को दो संभावनाओं के प्रति सचेत करता है;
5. उपरोक्त के परिणामस्वरूप दो प्रक्रियाओं को रेखांकित करना संभव है जो एक समाज में स्तरीकरण के भिन्न स्तरों पर या समान स्तर के भिन्न क्षेत्रों के संस्कारगत जीवन में दिखाई देते हैं।

डॉ. चौहान का कहना है ग्रामीण समुदाय के त्योहारों पर नजर डालने पर संस्कारों के प्रति रुचि में आने वाली गिरावट को स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है, जो गाँव में लौकिकीकरण के कार्य को व्याख्यायित करती है। अभी भी, हर त्योहार का एक-एक कर विश्लेषण करने पर उन त्योहारों को जिनकी महत्ता बनी हुई है तथा जिसमें लोगों की भागीदारी है और उनकी जिसमें गिरावट आई है, को अलग-अलग बाँटना संभव है। दोनों प्रकार गाँव में मौजूद हैं। तीसरी संभावना जिसमें त्योहार अपनी महत्ता प्राप्त करता है, वह इस गाँव में दिखाई नहीं देता। डॉ. चौहान का विचार है कि गाँव के संस्कार अपनी महत्ता को बड़े पैमाने पर बनाए रखने में सक्षम हैं। मुख्य रूप से फसलों की सुरक्षा और पानी की उपलब्धता जैसे जीवन के कुछ क्षेत्रों में अनिश्चितता लगातार बनी हुई है। जहां दुर्घटना और पुराने समय से बनी हुई कठिनाइयों की व्याख्या को आसानी से उन क्षेत्रों से संबद्ध कर दिया

गया है जिसके बारे में कुछ भी नहीं किया जा सकता, वहीं पारलौकिकता पर विश्वास से सहनशीलता अर्जित की जाती है।

डॉ. चौहान ने बताया है कि जीवन चक्र से जुड़े हुए संस्कार वही हैं जो उन क्षेत्रों से संबद्ध देवताओं के हैं। एक मामले में एक युवा व्यक्ति पुत्र प्राप्ति की इच्छा से गाँव के बाहर अपनी सेवाएं देते हुए देवता के कक्ष को यह सोचकर साफ करता है कि ईश्वर की स्तुति व आशीर्वाद से बेहतर और कोई रास्ता नहीं है। एक अन्य युवा व्यक्ति शोध के अंतिम चरण में उपरोक्त वर्णित व्यक्ति के पदचिह्नों पर चलता हुआ जान पड़ा। एक नवजात की मृत्यु को शीघ्र ही माना गया कि परिवार के देवता शांत नहीं हैं। विवाह अपने आप में धार्मिक एवं जादुई संस्कार का सम्मिश्रण है, जिसके प्रतिमान में जानबूझकर किया गया कोई भी नियम भंग ऐसा माना जाता है कि दोनों में से किसी भी परिवार पर विपत्ति कारक परिणाम डाल सकता है।

डॉ. चौहान के अनुसार दान और तीर्थ यात्रा, संस्कारगत संरचना के उस क्षेत्र को व्यक्त करते हैं जिसमें "वर्धित संस्कार" की दिशा में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। दान के उद्देश्य को विस्तृत रूप से परिभाषित किया जाता है और स्कूलों के लिए कोष धार्मिक कार्यों के नाम पर इकट्ठा किया जाता है। डॉ. चौहान के अनुसार गाँव में पशुओं के लिए तालाब और प्याऊ बनाए गए हैं तथा गर्मियों के महीनों में इन्हें भरा रखने के लिए आवश्यक मानवीय व्यवस्थाएं की गई हैं। दैनिक रूप से आने वाले भिखारियों को व्यक्तिगत दान देने में वही उत्साह तो दिखाई नहीं देता, परंतु कबूतरों को दाना खिलाने में वही उत्कंठा दिखाई देती है जो पहले होती थी।

तीर्थ यात्राओं में निश्चित रूप से वृद्धि हुई है, गंगा में स्नान को पवित्र कार्य माना गया है। गंगा स्नान से लौटने पर दस साल पहले जिस तरह समारोह किया जाता था अब उससे अधिक बड़े पैमाने पर उत्सव मनाया जाता है। यह शुद्धिकरण संस्कार परंपरागत ढांचे में मंदिर-निषेध से भिन्न सभी जातियों के लिए खुला है। गंगा स्नान से लौटने पर कभी भी समारोह किया जा सकता है गंगा स्नान के लिए जाने का सबसे सही अवसर वह होता है जब मृतक की राख को नदी में प्रवाहित करने के लिए ले जाया जाता है। वहां से लौटने पर "क्रियावर" के बजाय "गंगोज" या "प्रसादी" के द्वारा जातिभोज का अवसर उपलब्ध होता है। दाह संस्कार के पश्चात रात्रि भोज को गैर-कानूनी घोषित कर देने के बावजूद तीर्थ यात्राओं में बढ़ोत्तरी हुई थी, सांविधानिक उपाय ने बढ़ते हुए इस संस्कार के प्राचीन प्रतिमानों को आसान करने का प्रयास किया है। इन संस्कारगत प्रक्रियाओं को दो अवधारणाओं द्वारा व्याख्यायित किया जा सकता है—

(क) लौकिकीकरण और

(ख) वर्धित संस्कार ।

प्रथम, त्योहारों के क्षेत्र में क्रियाशील है, द्वितीय, दान एवं तीर्थयात्राओं के क्षेत्र में। अतएव जीवन-चक्र से जुड़े हुए संस्कार आज भी वैसे ही हैं, जैसे पहले थे। देवताओं की कुछ पुनर्परिभाषा एवं भूमिका ने परिणामस्वरूप नए देवताओं को जन्म दिया है। सामाजिक संरचना में मध्यम स्तर पर स्थित जातियों ने संस्कार के शास्त्रीय तत्वों एवं उसके अत्यधिक विस्तार के अवलोकन के प्रति अपने बढ़ते हुए रुझान को प्रदर्शित किया है और परिणामस्वरूप उनके संरक्षण में कारीगर-सेवा प्रदाता समूह के

जुड़ने से वृद्धि हुई है, जो लौकिकीकरण—वर्धित संस्कारों के दो विचारों में से दूसरे के पक्ष में संतुलित है।

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर हम कह सकते हैं कि डॉ. बी.आर. चौहान द्वारा प्रतिपादित अवधारणा "वर्धित संस्कार" संस्कृतिकरण की अवधारणा से न केवल अलग है बल्कि उसके पूरक के रूप में दिखाई देती है। वस्तुतः ग्रामीण समाज में उपस्थित उच्च वर्ग लौकिकीकरण के संवाहक के रूप में एवं निम्न वर्ग "वर्धित संस्कार" के वाहक के रूप में दिखाई देता है। मकिम मेरियट ने स्थानीयकरण एवं सार्वभौमिकरण की अपनी अवधारणा द्वारा यह स्पष्ट किया है कि लघु परंपरा के तत्व, वृहत समुदाय में तथा वृहत परंपरा के तत्व लघु समुदाय में प्रसरित होते हैं। डॉ. चौहान ने यह स्पष्ट किया है कि ग्रामीण समुदाय में लघु परंपरा के तत्वों के प्रति जो चेतना दिखाई देती है उसी से इसके संस्कारों में संवर्धन होता है जिसे इन्होंने "वर्धित संस्कार" कहा है।

संदर्भ सूची

1. चौहान, बी.आर.,(1999) अ राजस्थान विलेज, आदित्य ए.सी. ब्रदर्स, उदयपुर, राजस्थान
2. बॉटमोर, टी. बी., .,(2004) समाजशास्त्र समस्याओं और साहित्य का अध्ययन, ग्रंथ शिल्पी
3. लवानिया, डॉ. एम. एम. जैन, शशी के.,(1999) ग्रामीण समाजशास्त्र, रिसर्च पब्लिकेशन, नई दिल्ली,
4. श्रीनिवास, एम.एन.,(2009) आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,
5. दुबे, एस.सी.,(2000) भारतीय ग्राम (अनुवादक योगेश अटल), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली,